❁ श्रीसीतारामचन्द्रौ विजयेतेतराम् ❁

❁ श्रीस्वामी अग्रदासजी महाराजकृत ❁

ध्यानमञ्जरी

श्रीजानकीघाटनिवासी विद्वद्वराग्रगण्य परम-
ब्रह्मनिष्ठ श्री १०८ श्रीस्वामी पण्डित
श्रीरामवल्लभाशरणजी महाराजकृत
भाषाटीकासहिता

प्रकाशक—पुस्तक मिलने का पता—

श्रीरामकृष्णदास उत्सवी

* ठिकाना श्रीमणिरामजी महाराज की छावनी *

❁ श्रीअयोध्याजी ❁

प्रति १०००] संवत् १९९७ वैक्रमीय [मूल्य प्रेम

❋ श्रीराम पञ्चायतन ❋

❋ भगवान् के २४ अवतारों के नाम ❋

जय जय मीन, वराह, कमठ, नरहरि, बलि, बावन ।
परशुराम, रघुवीर, कृष्ण कीरति जगपावन ॥
बुद्ध, कलकी, व्यास, पृथु, हरि, हंस, मन्वन्तर ।
यज्ञ, ऋषभ, हयग्रीव, ध्रुव वरदैन, धन्वन्तर ॥
बद्रीपति, दत्त, कपिलदेव, सनकादिक, करुणाकरौ ।
चौबीस रूप लीला रुचिर, श्री अग्रदास उर पद धरौ ॥

* श्रीसीतारामचन्द्रौ विजयंतेतराम् *

* श्रीहनुमते नमः *

* श्रीमते भगवते रामानन्दाचार्य्याय नमः *

❀ अथ श्रीस्वामी अग्रदासजी कृत ❀

ध्यानमञ्जरी

* छन्द—रोला *

मूल—सुमिरौं श्रीरघुवीर धीर रघुवंशाविभूषण।
शरण गहे सुखराशि हरत अघसागर दूषण ॥१॥

* अथ कठिनपदबोधिका टीका *

दोहा—श्रीसियपिय सियपदकमल लखन भरत रिपुशाल।
इनके पद वन्दन करि वर्णौं ग्रन्थ रसाल ॥ १ ॥
भाषाटीका युत करौं ध्यानमञ्जरी नाम।
पढ़े गुने समुझे सुखद सन्तजनन अभिराम ॥ २ ॥

टीका—श्रीरघुवीर धीर रघुवंशाविभूषण को मैं स्मरण करता हूँ। रण में धीर रघुकुल में वीर रघुवंश को भूषित करनेवाल श्रीरघुवीर को मैं स्मरण करता हूँ। क्योंकि उन्हीं का ध्यान मुझे वर्णन करना है। इससे मेरे

विघ्न के नाश करनेवाले और दान दया शरणागत रक्षण में विलक्षण रघुवंशमात्र हैं। इसको भी भूषित करनेवाले आप हैं। उनका मैं स्मरण करता हूँ। शरणागति के ग्रहण करने से आप उसके लिये अपार सुख के स्थान हैं। और पापरूपी समुद्र के तथा दूषणों के सोखनेवाले हैं। हमारे पाप और दूषणों को नाश करेंगे तब हम उनके ध्यान वर्णन करने के योग्य होंगे ॥ १ ॥

मूल—सुन्दरराम उदार बाण कर शारँगधारी।
हियधरि प्रभु को ध्यान विदुषजनआनँदकारी २

टीका—अतिसुन्दर धनुषबाण को भक्तों के रक्षणार्थ हाथ में धारण करते हैं—और उदारचित्तवाले हैं अर्थात् भक्त जो चाहता है उसे उत्साह से देते हैं। ऐसे प्रभु का ध्यान हृदय में अवश्य धारण करना चाहिये। जो विद्वान्‌जन अथवा देवताओं की रक्षा कर आनन्द देनेवाले हैं ॥ २ ॥

मूल—अवधपुरी निजधाम परम अति सुन्दर राजै।
हाटकमणिमय सदन नगन की कान्ति विराजै ३

टीका—अतिसुन्दर श्रीअवधपुरी है, जो प्रभु का निजधाम शोभा देता है। जिसमें सुवर्णमणिमय मकान बने हैं। बीच बीच में अनेकन प्रकार के नग जड़े हैं। जिनकी कान्ति बहुत शोभित हो रही है ॥ ३ ॥

मूल—पौँरिद्वार अति चारु सुहावन चित्रित सोहैं।
चम्पतार मन्दार कल्पतरु देखत मोहैं ४

टीका—पौँरि=बड़ा फाटक, द्वार=छोटा दरवाजा, ये दोनों अतिशय सुहावन हैं। उनमें चित्रित=रङ्ग-रङ्ग के चित्राम

बने हैं—और चम्पतार मन्दार कल्पतरु ये सब देव वृक्ष हैं। इनके भी चित्राम बने हैं, जो शोभा दे रहे हैं। जिनको देखकर सब मोहित हो जाते हैं ॥ ४ ॥

मूल—भवन भवन चित्राम चित्र की रम्भा सोहैं।
बनज सुतन की पाँति कान्ति गोखन मग जोहैं ५

टीका- ऐसे ही भवन-भवन में अर्थात् सब भवनों में चित्राम बने हैं—और चित्र की रम्भादिक अप्सरा अथवा केला के वृक्ष चित्राम में बने हुए शोभा दे रहे हैं। और बनज सुतन=मोतिन की लरी की कान्ति शोभा दे रही है-और झरोखों के रास्ता से मानों रास्ता चलनेवालों को बुलाने के लिये रास्ता को देख रही है ॥ ५ ॥

मूल—तोरण केतु पताक ध्वजा तहँ परम सोहाई।
मनो रघुबर हितकरण आय त्रिभुवन छबि छाई ६

टीका- तोरण केतु पताका ध्वजा ये परम सोहाये=शोभा दे रहे हैं। मानों इनके बहाने त्रिभुवन की शोभा श्रीरघुवर=श्रीरघुनाथजी के हित नाम प्रीति बढ़ाने के लिये तीनों लोक की छवि आकर श्रीअवध में छाई हुई है ॥ ६ ॥

मूल—बीथी बगर बजार रतन खँचि ज्योति उजासा।
रहन न पावै तिमिर सहजही होत प्रकासा ७

टीका—वीथी=छोटी गली, बगर=मैदान, जहाँ सब एकत्रित होवें—ये सब रत्नों से खँचे हुए हैं। इनकी ज्योति इतनी प्रबल है कि जिसके उजेरा से तिमिर=अन्धकार नहीं रहने पाता। क्योंकि इनका सहज ही में प्रकाश हो रहा है। तब अन्धकार कैसे आ सके ॥ ७ ॥

मूल—देखि पुरी छबि भरी मध्य के अटकत रथ रबि।
हर्षहिं वर्षहिं सुमन विवुधजन निरखि पुरी छबि ८

टीका—छवि से भरी पुरी को देखकर मध्य के सूर्य का रथ अटक जाता है—अर्थात् पुरी की छवि को देखकर मध्याह्न के सूर्य्य मध्य आकाश में आते हुए थककर अटक जाते हैं। क्योंकि पुरी की शोभा को देखकर मध्य तारागण, चन्द्रमा, सूर्य्य सभी विलम्ब से चलते हैं। देवतागण शोभा को देखकर हर्षित हुए फूलों की वर्षा करते हैं॥ ८॥

मूल—श्रीरघुवर यश भरी पुरी वर वर की दायन।
धर्मशील नरनारि सबै प्रभु सुयश परायन॥ ९॥

टीका—पुरी श्रेष्ठ वर की देनेवाली है क्योंकि श्रीरघुबर के यश से भरी हुई है—अर्थात् नर नारि सब श्रीरघुनाथजी के यश को गान करते हैं, इसी से श्रेष्ठ फल के देनेवाली श्रीअवधपुरी है। जहाँ के नर नारि सब धर्मशील हैं और प्रभु के सुयश में परायण हो रहे हैं॥ ९॥

मूल—गावत रघुबर चरित मिलत जित तित ते भामिनि।
स्वर अस कोकिलनाद रूप जनु दमकति दामिनि १०

टीका—जहाँ के स्त्रीगण आते जाते में श्रीरघुनाथजी के यश को गान कर रही हैं—और परस्पर प्रेम से मिलती हैं। उनका स्वर जैसे कोकिल का नाद होय वैसे सुन्दर है। जिनका रूप दामिनी के समान प्रकाश कर रहा है॥१०॥

मूल—तिन युवतिन को भाग वरणि कापै कहि आवै।
शचि शारद नगसुता देखिकै मन ललचावै ११

टीका—तिन युवतिन का भाग किस कवि से कहते बन सकता है। शची शारदा नगसुता=पार्वतीजी जिनको देखकर ललचाती हैं। अर्थात् इन्द्राणी ब्रह्माणी शिवजी की शक्ति पार्वती जिनको देखकर ललचाती हैं कि हमारा ऐसा भाग नहीं कि इनके समान श्रीअवध में निवास होता और श्रीप्रभु के यश को गावतीं ॥ ११ ॥

मूल—अवध पुरिन की अवधि यही श्रुति संमृति बरणी।
ध्यान धरे सुखकरणि नाम उचरत अघहरणी १२

टीका—श्रीअयोध्याजी सब पुरियों की अवधि हैं—अर्थात् सब पुरी इनसी मर्यादा पावनता को नहीं पा सकतीं हैं। श्रुति स्मृति में यही वर्णन किया गया है। जो ध्यान धरने से सुख करनेवाली हैं। जिनका नाम उच्चारण करते ही सब पाप हरण हो जाते हैं—अर्थात् कोई ऐसा पाप नहीं जो श्रीअयोध्याजी के नाम लेने से नाश नहीं हो जावे ॥१२॥

मूल—करि करि बहुत क्लेश कहत उपमा जो गुणिजन।
अन्य उक्ति सब अल्प अवध सम अवध भले बन १३

टीका—गुणिजन=पण्डितगण बहुत से अमित क्लेशकर उपमा कहते हैं—परञ्च अन्य उक्ति सब थोरी हैं। श्रीअवध के समान श्रीअवध ही हैं, यही अच्छा बनता है ॥१३॥

मूल—बापी कूप तड़ाग रतन सोपान बनाये।
रहे अमल जल पूरि बिकसि कल्हार जु छाये १४

टीका—जिस पुरी में बाउड़ी कुआँ तलाव ऐसे शोभा देते हैं। जिनकी रत्नों से सोपान=सीढ़ी बनी हैं—और निर्मल जल से पूरित हैं—अर्थात् उनमें निर्मल स्वच्छ जल

पूर्णरूप से भरा हुआ है और खिले हुए पीत कमल शोभा दे रहे हैं ॥१४॥

मूल—शीतल तरु की छाँह विहँग कूजत मनभाये।
चहूँ ओर आराम लगत उपबन जु सुहाये १५

टीका—वृक्ष चारों तरफ लगे हुए हैं। जिनकी छाया परम शीतल है। उनके ऊपर मनभाये अर्थात् बहुत सोहावन पक्षीगण सुरीली बोली बोल रहे हैं—और जिनके चारों तरफ वाटिका लगी हैं—और सोहाये उपवन=समीप के वन शोभा दे रहे हैं॥ १५ ॥

मूल—तिन पर केकि कपोत कीर कोकिल किलकारत।
सुर धरि तिनकी देह मनों प्रभु सुयश उचारत १६

टीका—तिनके ऊपर मयूर कबूतर शूगा कोकिला सुख से भरे किलकार रहे हैं। मानों पक्षियों की देह धारण कर देवता सब प्रभु के सुयश को उच्चारण कर रहे हैं ॥१६॥

मूल—झूमि रहे लगिडार भार फल फूलन भारी।
पथिकजनन फलदेन मनहुँ तिन भुजा पसारी १७

टीका—वृक्षों की डारें भारी शोभा से भरी हुई फल फूलों से नीचे को झुक रही हैं—परञ्च वे तो पथिकजनों के लिये अपनी भुजाओं से डार के बहाने सब रास्ता चलनेवालों को बुला रही हैं ॥ १७ ॥

मूल—निकटहिं सरयू सरित धरे अस उज्ज्वल धारा।
भवसागर को तरणि विदित यह पोत उदारा १८

टीका—परम निकट उज्ज्वल धारावाली श्रीसरयूजी बहि रहीं

है जो संसारसमुद्र के तरने के लिये विदित यह बड़ा भारी उदार पोत=जहाज हैं—अर्थात् जो श्रीसरयूजी में स्नान पान करते हैं वे संसार से अनायास पार हो जाते हैं। इसी से इनको उदार पोत बतलाया है। पोत नाम यहाँ जहाज का जानना ॥ १८ ॥

मूल—हरण पाप त्रयताप जनन चिन्तित फल देनी।
सुकृती जन आरोह सुदृढ़ वैकुण्ठ निसेनी १९

टीका—जो सरयू पाप=मन वचन कर्म तज्जन्य जो ताप उसको हरनेवाली हैं और अपने दासों को चिन्तित फल को देनेवाली हैं। सुकृतीजनों को आरोह ऊपर जाने के लिये यह मानों वैकुण्ठ की निसेनी हैं—अर्थात् जो सुकृतीजन श्रीसरयूजी में स्नान पान करते हैं उनको भगवद्धाम जाने के लिये श्रीसरयूजी नाशरहित वैकुण्ठ धाम की निसेनी सीढ़ी हैं। जिसके अवलम्ब से सहज में भगवद्धाम को जन पा सके। यहाँ कुण्ठ नाश के अर्थ में है जिसमें नाश विगत होय उसी को विकुण्ठ कहते हैं। विकुण्ठ ही वैकुण्ठ है। यहाँ पर स्वार्थ में अण् प्रत्यय को जानना। १९ ॥

मूल—तीर नरन की भीर लगत अस परम सुहाए।
मनहुँ व्योम को त्यागि अमरगण सेवन आए २०

टीका—जिनके तीर में नरों की भीर ऐसी परम सुहावनी लगती है—मानों अमरगण सुरपुर को छोड़कर श्रीसरयू जी के सेवन के लिये तीर में आये हैं ॥ २० ॥

मूल—करैं जो मज्जन पान धन्य बड़भाग जनन के।
विविध भाँति के घाट तहाँ मन थकित मुनिन के २१

टीका—जो जन श्रीसरयू स्नान करते हैं—वे परम धन्यवाद के पात्र हैं—अर्थात् उनके भाग की सराहना ब्रह्मादि देव करते हैं। जिनमें विविध प्रकार के घाट बने हैं। जहाँ पर मुनियों के मन थकित होकर उसी में लग रहे हैं ॥२१॥

मूल—नीर परम गम्भीर चलत गहिरे स्वर गाजैं।
तहाँ तीर वहु सघन कमल अति सुन्दर राजैं २२

टीका—जिस श्रीसरयू का जल परम गम्भीर गहिरे स्वर से शब्द कर बहि रहा है तहाँ पर किनारे किनारे सघन कमल के वृन्द अति सुन्दर शोभा दे रहे हैं ॥ २२ ॥

मूल—कमल कमल के मध्य यूथ मिलि भँवर गुंजारैं।
मानहुँ मुनिजन वृन्द वेद ध्वनि शब्द उचारैं २३

टीका—कमल कमल के बीच में भौंरों के वृन्द सुरीली वाणी से गुंजार कर रहे हैं,—मानों मुनिजनों के वृन्द मधुर शब्द से वेद की ध्वनि का उच्चारण कर रहे हैं ॥ २३ ॥

मूल—त्रिविध वयारि वहार वहत निशि दिन अघहारी।
शीतल मन्द सुगन्ध परम अति आनँदकारी २४

टीका—तीन प्रकार का पवन अर्थात् शीतल मन्द सुगन्ध युक्त परम बहार के साथ बहि रहा है। श्रीसरयूजी के स्पर्श से वह पवन सब पापों को हरनेवाला है। जो अपने शीतल मन्द सुगन्ध गुणों से परम आनन्द करनेवाला है। और वह पवन रात दिन निरन्तर बहि रहा है ॥ २४ ॥

मूल—बोलत चकवा कुराड तीर मन मोद बढ़ावैं।
मानहुँ परम सुदेश निकर मिलि गन्धर्व गावैं २५

टीका—चकई चकवा कुण्डों के तीर में बोल रहे हैं। जो मन के मोद को बढ़ाते हैं। मानों परम सुदेश में गन्धर्व-गण समूह मिलकर गान कर रहे हैं॥ २५॥

मूल—कानन तहाँ अशोक शोक तेहि देखत भाजै।
विविध भाँति के वृक्ष सबै वृन्दारक राजै २६

टीका—तहाँ ही पर अशोक वाटिका है। जिसके देखे से शोक भाग जाता है। जिस वाटिका में सब वृक्ष मन्दारादिक देववृक्षों के समान शोभा दे रहे हैं—अर्थात् देवलोक को छोड़कर इसी वाटिका में आकर सब बसे हुए हैं॥ २६॥

मूल—शाखा पत्र अनूप कहा कहों शोभा उनकी।
फलकुसुमनके झुण्ड निरखि सुधि रहति न तनकी २७

टीका—जिन वृक्षों की शाखायें तथा पत्र पुष्पादिक ऐसे अनुपम हैं—कि जिनकी शोभा को कोई कवि कह नहीं सकते हैं। जिन वृक्षों में फल फूलों के ऐसे झुण्ड लगे हैं—कि जिनके देखने से शरीर की सुधि भूलि जाती है—अर्थात् अनेक यत्न से जो शरीर नहीं भूलता है वह इन फल फूलों के झुण्डों को देखकर सहज में भूल जाता है॥ २७॥

मूल—कल्पवृक्ष के निकट तहाँ यक धाम मणिन युत।
कञ्चनमय सव भूमि परम अति राजत अद्भुत २८

टीका—कल्पवृक्ष के समीप में मणियुत एक सुन्दर धाम अर्थात् मण्डप बना है। काञ्चनमय सब भूमि शोभा दे रही है। जो अति अद्भुत प्रकाश कर रही है—अर्थात् सुवर्णमय भूमि है वह अद्भुत प्रकाशमयी है॥ २८॥

मूल—स्वर्णबेदिका मध्य तहाँ यक रतन सिंहासन।
सिंहासन के मध्य परम अति पदुम शुभासन २९

टीका—उस मण्डप के मध्य में सुवर्ण की वेदी बनी है। जिसके मध्य में रत्नों से जटित सिंहासन है। जिस पर परम सुन्दर पद्म का सुन्दर आसन बना है॥ २९॥

मूल—ताके मध्य सुदेश कर्णिका सुन्दर राजै।
अति अद्भुत तहँ तेज बह्नि सम उपमा भ्राजै ३०

टीका—तिस सिंहासन के मध्य में कमल की कर्णिका अति सुन्दर प्रकाश कर रही है। उस कर्णिका का अतिशय तेज है। जो अग्नि के समान उपमा देते हुए शोभा दे रहा है॥ ३०॥

मूल—तामधि शोभित राम नील इन्दीवर ओभा।
अखिल रूप अम्भोधि सजलघन तनकी शोभा ३१

टीका—उस अग्नि के प्रकाश में नील कमल के समान श्रीरामजी के अङ्ग सुहावन हैं—वे उस पर शोभित हो रहे हैं। जो अखिल रूप के अम्भोधि अर्थात् सब रूप के अथाह समुद्र हैं। जिनकी शोभा जलयुक्त नील मेघ के समान है॥ ३१॥

मूल—शिर पर दिब्य किरीट जटित मञ्जुल मणि मोती।
निरखि रुचिरता लजित निकर दिनकर की ज्योती ३२

टीका—श्रीरामजी के मनोहर शिर के ऊपर मणियों से जटित दिव्य किरीट शोभा दे रहा है। जिसकी रुचिरता को देखकर ललित सूर्य्य की ज्योति लज्जित होती है॥ ३२॥

मूल—कुण्डल ललित कपोल युगल अति परम सुदेशा।
तिनको निरखि प्रकाश लजित राकेश दिनेशा ३३

टीका—और सुन्दर दोनों कपोलों पर कुण्डल झलक रहे हैं। जो कर्ण में श्रीरामजी धारण किये हैं। वे अपने सुन्दर देश के अर्थात् अपने विभाग से परम सुन्दरता से भरे हुए हैं। तिनके प्रकाश को देखकर शरद का चन्द्रमा और सूर्य्य दोनों लज्जित होते हैं। अपने में वैसी शोभा नहीं पाते हैं॥ ३३ ॥

मूल—मेचक कुटिल सुकेश सरोरुह नयन सुहाये।
मुख पङ्कज के निकट मनहुँ अलि छौना आये ३४

टीका—मेचक=काले सुन्दर टेढ़े केश हैं। जो परम सुहाये लगते हैं—अर्थात् जिनकी शोभा को देखकर मन लुभाय के रहि जाता है—और कमल के समान सुन्दर नेत्र भी शोभा देते हैं। मानों केश नहीं हैं मुखकमल के नगीच भ्रमरों के छोटे छोटे बच्चे आये हुए हैं॥ ३४ ॥

मूल—भृकुटी त्रयपद दुगुन मनहुँ अलि अवलि बिराजै।
नाशा परम सुदेश वदन लखि पङ्कज लाजै ३५

टीका—भृकुटी त्रयपद को द्विगुण करने से षट्पद भया इससे भृकुटी के केश भ्रमर के समान शोभा दे रहे हैं। मानों छोटे भ्रमरों की पंक्ति शोभा देती है। यहाँ पर षट्पद शब्द से भ्रमर और अलि शब्द से छोटी भ्रमरी जानना चाहिये। अष्टयाम में भी ऐसा ही लिखा है। प्रमाण-तद्यथा भ्रमरालिकुलैर्युक्ते०। भ्रमर ऊपर की भौंहैं और अलि भ्रमरी नीचे की भौंहैं शोभा देती हैं और नीचे

की भृकुटी छोटी भ्रमरी हैं। नासिका परम सुदेश=सुन्दर है और मुखकमल को देखकर कमल लज्जित होता है॥३५॥

मूल—चितवनि चारु कृपाल रसिक जन मन आकर्षत।
मन्दहास मृदु बयन जनन को आनँद वर्षत ३६

टीका—और चितवनि कृपा से भरी ऐसी सुन्दर है—जो रसिकों के मन को अपने वश में कर लेनेवाली है। यहाँ रसिक शब्द से जो श्रीरामजी के प्रेमरस के भोक्ता हैं उनको जानना। मन्दहास कोमल वाणी ऐसी सुन्दर है जो अपने दासों को आनन्द की वर्षा करनेवाली है॥ ३६॥

मूल—दीरघ दीप्त ललाट ज्ञानमुद्रा दृढ़ धारी।
सुन्दर तिलक उदार अधिक छबि शोभित भारी ३७

टीका—और दीर्घ प्रकाशमय ललाट है—(क्योंकि उन्नत ललाट लक्षण शास्त्र में प्रशस्त रूप से वर्णित है) और ज्ञानमुद्रा को दृढ़ता के साथ धारण किये हैं। तात्पर्य यह है कि जो इस मुद्रा के ध्यान करनेवाले प्रेमीजन हैं उन्हें यह मुद्रा ज्ञान देती है जिससे वे श्रीसीतारामजी के परत्व ऐश्वर्य को जान सकें। उस ललाट पर सुन्दर उदार गुण से सम्पन्न तिलक है जो अधिक भारी छबि से शोभित है॥ ३७॥

मूल—परम ललित मणिमाल हार मुक्ता छबि राजै।
उर श्रीवत्स सुचिन्ह कण्ठ कौस्तुभमणि भ्राजै ३८

टीका—परम ललित मणियों की माला और मोती का हार परम छवि से शोभा दे रहा है—और उर में=वक्षस्थल में श्रीवत्स का चिन्ह शोभा देता है जैसे मुक्ताहार=मोती-

हार इनकी शोभा है—वैसे ही कण्ठ में कौस्तुभमणि शोभा देता है। जो सब मणियों में श्रेष्ठ है ॥ ३८ ॥

मूल—यज्ञोपवीत सुदेश मध्य धारा जु विराजै।
उभय भुजा आजानु नगन जटि कङ्कण राजै ३९

टीका—मध्य में यज्ञोपवीत अपने देश का बहुत सुन्दर मालूम पड़ता है— मानों गङ्गा की धारा है। दोनों भुजा आजानु हैं अर्थात् जानु पर्य्यन्त शोभा देते हैं और नगन से जड़े भये कङ्कण करकमल में प्रकाश कर रहे हैं ।३९॥

मूल—चूनी रतन जराय मुद्रिका अधिक सँवारी।
शोभित अद्भुत रूप अरुण की छवि अनुहारी ४०

टीका—चूनी और रत्नों से जड़ी हुई मुँदरी अधिक सम्हारि के बनाई गई है। वह शोभा देती है। चूनी छोटी छोटी मणियाँ जिसमें लगी हैं। और वह मुद्रिका अधिक छवि से शोभित है—मानों सूर्य है अर्थात् सूर्य के समान प्रकाश दे रही है॥४०॥

मूल—भूषण विविध सुदेश पीतपट शोभित भारी।
लसत कोर चहुँ ओर छोर कल कञ्चनधारी ४१

टीका—सुन्दर देश के बने हुए विविधि प्रकार के भूषण अंग अंग में शोभा देते हैं। उनके पास में पीतपट=पीताम्बर जो भारी छवि से शोभित है। जिसके चारिउ ओर कोर किनारे में सुवर्ण की धारी बनी है ॥ ४१ ॥

मूल—रोमावलि बनिआइ नाभि अस लगति सुहाई।
त्रिबली तामधि ललित रेखत्रय अति छबि छाई ४२

टीका—रोमावलि अति सुन्दर बनि आई है। नाभि अति सुहाई

प्रिय लगती है---और त्रिवली भी अति ललित तिसके मध्य में जो तीन रेखा से अति छवि से छाई हुई है ॥ ४२ ॥

मूल—कटि परदेश सुढार अधिक छबि किङ्किणि राजै।
जानु पुष्ट बनि गूढ़ गुल्फ अति ललित बिराजै ४३

टीका—कटि प्रदेश में अति छवि से भरी हुई किङ्किणी प्रकाश कर रही हैं और जानु पुष्ट हैं। गुल्फ गूढ़ छिपी हुई अति सोहाई लग रही हैं ॥ ४३ ॥

मूल—नूपुर पुरट सुचारु रचित मणि माणिक सोहैं।
रव कल स्वर सङ्गीत सुनत परिजन मन मोहैं ४४

टीका—और नूपुर सुवर्ण का अति सुन्दर शोभा दे रहा है। जो मणि और माणिक से जड़ा हुआ है। जो बहुत शोभा दे रहा है। जिसका मनोहर शब्द ऐसा सुन्दर है कि पास में बैठे हुए सुकृतीजनों के मन को मोहित कर रहा है ॥ ४४ ॥

मूल—युगल अरुण पदपद्म चिन्हकुलिशादिक मण्डित।
पद्मा नित्य निकेत शरणागत भवभय खण्डित ४५

टीका—और दोनों चरण कमल अति सुहावन हैं। जो अरुण रङ्ग के तरवा हैं। जिनमें वज्रादिक चिन्ह शोभा देते हैं। उन चिन्हों से चरण मण्डित हैं। जो लक्ष्मीजी का नित्य निवासस्थल है—और शरणागतों के संसारी भय को खण्डन करनेवाला है ॥ ४५ ॥

मूल—दक्षिण भुज शर सुभग सुहावन सुन्दर राजै।
दिव्यायुध सुविशाल वाम कर धनुष विराजै ४६

टीका—दक्षिण भुजा में परम सुहावन बाण प्रकाश करता है—और दिव्य आयुध अर्थात् सब आयुधों में श्रेष्ठ दिव्य धनुष वाम कर कमल में शोभा देता है। जो अति विशाल है ॥४६॥

मूल—षोडश बर्ष किशोर राम नित सुन्दर राजैं।
राम रूप को निरखि बिभाकर कोटिक लाजैं ४७

टीका—इस प्रकार से सोरह वर्ष के नित्य किशोर श्रीरामजी सुन्दर शोभा देते हैं। श्रीरामजी के रूप को देखकर कोटिन सूर्य्य लज्जित होते हैं। तात्पर्य्य यह है कि श्रीरामजी का रूप कोटि सूर्य्य से भी अति प्रकाशमय सिंहासन पर शोभित है ॥ ४७ ॥

मूल—अस राजत रघुबीर धीर आसन सुखकारी।
रूप सच्चिदानन्द बाम दिशि जनककुमारी ४८

टीका—श्रीरघुवीर धीर इस प्रकार से सुखासन से विराजे हैं। जिनका रूप सच्चिदानन्द है—और वैसे ही लक्षण युक्त वाम दिशा में अर्थात् वामभाग में श्रीजनककुमारीजी शोभा देती हैं ॥ ४८ ॥

मूल—नगन जरे छबि भरे विविध भूषण अस सोहैं।
सुन्दर अङ्ग उदार बिदित चामीकर कोहैं ४९

टीका—अनेकन प्रकार के नगों से जड़े हुए भूषण अति शोभित हैं। और सुन्दर अङ्ग, सब ध्यान कर्त्ताओं के चित्त को सब फल देने में उदार महाछवियुक्त विविध प्रकार के सब अङ्ग विदित जो चामीकर सुवर्ण है उसी के समान शोभित हैं। इस अङ्ग के सामने चामीकर सोना क्या है अर्थात् कुछ नहीं ॥ ४९ ॥

मूल—अलक झलकता श्याम पीठ शोभित कल बेणी ।
सुन्दरता की सींव किधौं राजति अलि श्रेणी ५०

टीका—अलक की झलकता पीठ के ऊपर शोभा देती है—अर्थात् केश को बटोर कर प्रिय सखियों ने जो वेणी गूथ रक्खी हैं वह पीठ पर शोभा दे रही है। जो अति सुन्दर है। वह वेणी सुन्दरता की मर्य्यादा है। अथवा भ्रमरों की पंक्ति शोभित है॥ ५० ॥

मूल—रचित सुविविध प्रकार माँग जरतार सँवारी।
मनहुँ सुरसरी धार बनी शोभा अस भारी ५१

टीका—विविध प्रकार से जरतार अर्थात् कलाबत्तू वगैरह से सँवारी हुई माँग सुहाग का चिन्ह परम शोभा दे रही है। मानों गङ्गाजी की धारा अति शोभा से भरी हुई सुहावन हो रही है॥ ५१ ॥

मूल—पाटन की लर और बड़े बड़े उज्ज्वल मोती।
सघन तिमिर के मध्य मनों उडुगण की ज्योती ५२

टीका—पाटन=रेशम की लर बड़े बड़े मोती जिसमें गूँथे हुए हैं। उज्ज्वल अर्थात् सफ़ेद रङ्ग के शोभित हैं। मानों सघन अन्धकार के बीच में तारागणों की ज्योति प्रकाश कर रही है। यहाँ पर केश सघन तिमिर हैं—और उज्ज्वल मोती बड़े बड़े तारागणों के समान शोभा दे रहे हैं॥ ५२ ॥

मूल—रतन रचित मणि जटित शीश पर बिन्दा छाजै।
ललित कपोल सुयुगल कर्ण ताटङ्क बिराजै ५३

टीका—रत्नों से रचित अनेक रङ्ग के मणियों से जटित

शिर पर बिन्दा शोभा देता है—और युगल ललित कपोलों पर ताटङ्क जो हैं कर्णफूल वे अति शोभित हैं ॥ ५३ ॥

मूल—उज्ज्वल भाल सुचारु अमित उपमा अस सोहै।
राजत परम सोहाग भाग को भवन किधौं है ५४

टीका—इस प्रकार से श्रीमिथिलेशकिशोरीजी का भाल ललाट उज्ज्वल जिसकी उपमा अमित है। कोई कवि कहकर पार नहीं पा सकते हैं। इस प्रकार वह भाल शोभा दे रहा है। वह भाल परम सुहाग को पूर्ण भाग है या उसके भाग कोई कवि नहीं कह सकता है ॥ ५४ ॥

मूल—गोरोचन को तिलक ललित रेखा बनि आई।
उन्नत नासा सुभग लसत बेसरि जु सुहाई ५५

टीका—गोरोचन का तिलक ललाट पर शोभित है। जिसकी ललित रेखा सुन्दर बनि आई है—अर्थात् उसकी कुछ उपमा कहीं नहीं मिल सकती है। और उन्नत नासिका जिसमें सोहाई बेसर शोभा देती है—अर्थात् नासिका उन्नत ऊँची है वह सामुद्रोक्त लक्षणों से सम्पन्न है। जिसमें परम सुहाई बेसर नथ नगों से जड़ित परम शोभा देती है ॥५५॥

मूल—भृकुटी नयन विशाल सौम्य चितवनि जगपावन।
मानहुँ बिकसित कमल बदन अस लगत सुहावन ५६

टीका—भृकुटी तथा नेत्र अति विशाल, चितवनि परम सौम्य, जगत् को पावन करनेवाली है—अर्थात् सौम्य चितवनि उसे कहते हैं जो न बहुत कड़ी है न बिलकुल मन्द है और जो जगत् को पवित्र करनेवाली है। मानों प्रफ-

ल्लित कमल होय इस तरह मुखकमल की शोभा है जो परम सुहावन लगत है ॥ ५६ ॥

मूल—अरुण अधर तर दशन पाँति अस लगति सुहाई।
चारु चिबुक बिच तनक बिन्दु मेचक छबि छाई ५७

टीका—अरुण रङ्ग के अधर ओष्ठ हैं। उनमें दन्तों की पंक्ति बड़ी सोहाई लगती है। और सुन्दर चिबुक अर्थात् ठोढ़ी के बीच में छोटासा काला बिन्दु शोभा देता है ॥ ५७ ॥

मूल—कण्ठ पोति मणि ज्योति सुछबि मुक्ता बरमाला।
पदिक रचित कलधौत बिराजत हृदय बिशाला ५८

टीका—कण्ठ में पोत के समान छोटे छोटे मणियों को धारण किये हैं। उनकी ज्योति परम प्रकाशमयी है—और फेर कण्ठ में मोती अथवा गजमुक्ता उसकी माला शोभित है। विशाल हृदय पर सुवर्णमय मणियों से जटित पदिक शोभा देता है ॥ ५८ ॥

मूल—हेमतन्तुकर रचित अरुण सारी रँग भीनी।
कञ्चुकि चित्रित चतुर विविध शोभित रँग भीनी ५९

टीका—हेमतन्तु से=सुवर्ण की डोरियों से बनी हुई अरुण रङ्ग की सारी अनुराग रङ्ग में भरी हुई शोभा देती है—और चतुर पुरुष से रची हुई=बनी हुई और पतले रङ्ग से रँगी हुई कञ्चुकी चोली बहुत शोभा देती है ॥ ५९ ॥

मूल—वर अङ्गद छबि देति बाहु अस लगति सुहाई।
करन चुरी रँग भरी ललित मुँदरी बनि आई ६०

टीका—श्रेष्ठ अङ्गद बिजायठ से शोभित बाहु ऐसी सुन्दर

सुहावन लगती हैं। करन की चूरी अनुराग रङ्ग से भरी हुई हैं और ललित मुँदरी तो ऐसी बनि आई है—जिसको कवि कह नहीं सकते हैं ॥ ६० ॥

मूल—पद्मराग मणि नील जटित युग कङ्कण राजैं।
मनहुँ बनज के फूल द्विरेफनि पंक्ति बिराजैं ६१

टीका—पद्मराग मूँगा मणियों से जटित दोनों करकमल में कङ्कण बहुत शोभा देते हैं। मानों कमल के फूल के भीतर भ्रमर की पंक्ति शोभा देती है ॥ ६१ ॥

मूल—लहँगा कटि परदेश भाँति अति शोभित गहरी।
अरुण असित सित पीत मध्य नाना रँग लहरी ६२

टीका—और कटि प्रदेश पर लहँगा जो गहिरी भाँति से अर्थात् अतिशय शोभा दे रहा है—और वह लहँगा कहीं अरुण, कहीं नील, कहीं पीत, कहीं श्वेत मध्य में लहरिया दार बहुत शोभा दे रहा है ॥ ६२ ॥

मूल—हरित नगन कर जरित युगल जेहरि अस राजैं।
तिन तर घुँघुरू और अग्र बिछिया जु बिराजैं ६३

टीका—हरित नगों से जड़ी हुई जो जेहरी=यव पायँजेब के समीप में शोभा देता है। तिनके ऊपर घुँघुरू, नूपुर और बिछिया विशेष प्रकाश कर रहे हैं ॥ ६३ ॥

मूल—तिन पर नग जु अमोल ललित चूनी गण लाये।
चरण चारु तल अरुण सहजही लगत सुहाये ६४

टीका—तिनके ऊपर अमोल रत्नों से जड़े हुए नग तथा नगों की चूनी छोटे छोटे भाग बहुत शोभा देते हैं। चरण

चारु=सुन्दर हैं और अरुण जिनके नख हैं—जो सहज में सुहाये लगते हैं ॥ ६४ ॥

मूल—अतुलित युगल स्वरूप कवन अस उपमा जिनकी ।
जेतिक उपमा दीप्त शक्ति करि भासित तिनकी ६५

टीका—युगल स्वरूप श्रीसीतारामजी अतुल छवि से भरे हुए जिनके स्वरूप ऐसे हैं । जिनकी उपमा कौन कवि दे सकता है—क्योंकि जितनी उपमा जगत् में प्रकाशित हैं और शोभित हैं वे सब परम श्रेष्ठ शोभावाले उनकी शक्ति से जगत् में प्रकाशित हैं ॥ ६५ ॥

मूल—यहि विधि राजत राम अवधपुर अवधविहारी ।
दम्पति परम उदार सुयश सेवक सुखकारी ६६

टीका—इस प्रकार से श्रीअवधविहारी रामजी श्रीअवध में सदा शोभित हैं—और दोनों श्रीसीतारामजी ऐसे हैं जिनके उदार सुयश से सेवक सदा सुखी रहते हैं ॥ ६६ ॥

मूल—दक्षिण भुज रिपुदलन गौर तन तेज उदारा ।
उभय हेतु अनुसार धरे व्रत खण्डित धारा ६७

टीका—दक्षिण को दिये हुए श्रीशत्रुसूदन=शत्रुघ्नजी जिनका तन तेजोमय उदार शोभित है—अर्थात् जिनके सुयश से सेवक गणों के कामादि शत्रुओं का नाश होता है । इसीसे वे सेवकगण सदा सुखी रहते हैं । दोनों श्रीसीतारामजी के वास्ते अखण्डित धारावाले व्रत को धारण किये हैं—अर्थात् एकरस दोनों की सेवाव्रत धारण किये हैं ॥ ६७ ॥

मूल—शेष लिए कर छत्र भरत लिए चवँर दुरावैं ।
अनिलसुवन करजोरि सुप्रभु की कीरति गावैं ६८

टीका—शेषजी=लक्ष्मणजी छत्र लिये पश्चिम भाग में हैं—और दक्षिण भाग में श्रीभरतजी चवँर लिये खड़े हैं। यहाँ पर श्रीअग्रस्वामीजी इसी प्रकार से ध्यान को वर्णन करते हैं। श्रीगोस्वामीजी के सम्मत में श्रीलक्ष्मणजी दहिने श्रीभरतजी पश्चिम में श्रीशत्रुघ्नजी वाम भाग उत्तर में श्रीहनुमान्‌जी पूर्व में हैं। ये ऐसे ही ध्यान को वर्णन करते हैं। इससे ये आया जिसको जो रुचे वैसा ध्यान करे। जैसे वाल्मीकीयजी में दूसराही कहा है। श्रीहनुमान्‌जी प्रभु की कीरति को हाथ जोड़ कर पूर्व में खड़े हुए गा रहे हैं॥६८॥

मूल—अपनी अपनी ठौर नित्य परिकर बनिभारी ।
सुरति शक्ति बिमलादि रहत नित आज्ञाकारी ६९

टीका—ऐसे ही अपनी अपनी ठौर पर नित्य परिकर जो सदा सेवा में रहते हैं वे भारी भाँति से बने हुए हैं। सुरति और विमलादि शक्ति नित्य आज्ञाकारी होकर सेवा में लगी हैं॥ ६९ ॥

मूल—जो जो जेहि अधिकार सचिव सेवा मन बासै ।
बीणाधर सुरतान गान करि प्रभुहिं उपासै ७०

टीका—जो जो जिस अधिकार पर हैं—और मन्त्रियों का जैसा मन उपासना का है वैसे फल प्रभु उन्हें दे रहे हैं। वीणाधर=नारदजी आदि सब सुर तान सहित गान करके प्रभु की उपासना कर रहे हैं। अथवा सेवा करनेवाले बीणा को धारण किये गान से प्रभु की उपासना कर रहे हैं॥ ७० ॥

मूल—यही ध्यान उर धरै स्वयं तन सुफल करेवा।
भव चतुरानन आदि चरण बन्दैं सब देवा ७१

टीका—यही ध्यान हृदय में धारण करै और अपने शरीर को सुन्दर फलवाला बनावै। भव=शङ्करजी। चतुरानन=ब्रह्माजी आदि सब देवता चरणों की बन्दना करते हैं। इससे सर्वोपास्य श्रीरामजी को ठहराया॥ ७१॥

मूल—यह दम्पति बर ध्यान रसिक जन नित प्रति ध्यावैं।
रसिक बिना यह ध्यान और सपनेहुँ नहिं पावैं ७२

टीका—यह दम्पति श्रीसीतारामजी का ध्यान रसिकजन नित्य ध्यान करते हैं। रसिक बिना अर्थात् प्रेमी जनों के बिना और इस ध्यान को स्वप्न में भी नहीं पा सकते हैं॥ ७२॥

मूल—अमल अमृत रसधार रसिक जन यहि रस पागैं।
तेहिको नीरस ज्ञान योग तप छोई लागैं ७३

टीका—यह अमल=निर्मल, अमृत रस की धारा है। रसिकजन इसी में पगे हुए हैं। तिनको ज्ञान योग तप आदि सब साधन छोई समान लगते हैं। यह ध्यान रसरूप है। ज्ञान योग तप सब साधन इसके बिना छोई के समान निरस हैं॥ ७३॥

मूल—परमसार यह चरित सुनत श्रवणन अघहारी।
ध्यान परम कल्याण सन्त जन आनँदकारी ७४

टीका—यह चरित्र सबका परमसार है और सब पापों का रात्रि दिन नाश करनेवाला है। श्रवण से सुनते मात्र सब पाप नाश हो जाते हैं और यह ध्यान परम कल्याणमय है।

सन्तजनों को आनन्द देनेवाला है—और सबको फीका मालूम परता है। इसी से इस ध्यान से वे विमुख हैं ॥७४॥

मूल—तिन्हैं भूलि जनि कहौ कुटिलता पङ्क मलिन मन।
यह उज्ज्वल मणिमाल पहिरिहैं परम रसिक जन ७५

टीका—जिनका मन कुटिलता रूपी पङ्क=कीच से मन्द है उनसे भूल करके भी इसको मत कहो। यह सुन्दर रस-मय मणियों की माला है। इसको परम रसिक प्रेमी जन ही पहिर सकेंगे ॥ ७५ ॥

मूल—जगतईश को रूप बरणि कह कवन अधिक मति।
कहाँ अल्प खद्योत भानु के निकट करै द्युति ७६

टीका—जब जगत् के ईश श्रीरामजी हैं तो कौन अधिक बुद्धिवाला है जो उनके रूप को वर्णन कर सकै। अल्प छोटा खद्योत सूर्य्य के सामने क्या अपना प्रकाश दिखावेगा ॥७६॥

मूल—कहँ चातक की शक्ति अखिल जल चोंच समावै।
कछुक बुन्द मुख परै ताहिलै आनँद पावै ७७

टीका—चातक की शक्ति इतनी कहाँ है जो सब जल को अपने चोंच में भर सकै। कुछ बुन्द मुख में परते हैं उसी को लेकर आनन्द पाता है। ऐसे ही कवि जन इतनी शक्तिवाले कहाँ हैं जो सब रूप को वर्णन कर सकें। कुछ बुन्द के समान जो ध्यान उनके मन में आय जाता है उसी से आनन्द पाते हैं ॥ ७७ ॥

मूल—सुनि आगम विधि अर्थ कछुक जो मनहिं सुहायो।
यह मङ्गलकर ध्यान यथामति बरणि सुनायो ७८

टीका—आगम विधि तन्त्रों की विधि को सुनकर और जो कुछ आचार्योपदेशानुकूल उनमें आया और मन को सुहाया उससे यह मङ्गल कर ध्यान वर्णन करके सुनाया है ॥ ७८ ॥

मूल—श्रीगुरु सन्त अनुग्रह ते अस गोपुर बासी।
रसिक जनन हितकरन रहसि यह ताहि प्रकासी ७६

टीका—श्रीगुरु और सन्तों की कृपा से गोपुरवासी श्रीअग्र स्वामीजी ने इस ध्यान को वर्णन कर सुना दिया है। यह ध्यान रसिकजनों के हित करने के लिये है। इनके वास्ते इसका प्रकाश किया गया है ॥ ७६ ॥

मूल—ध्यानमञ्जरी नाम सुनत मन मोद बढ़ावै।
श्रीरघुबर को दास मुदित मन अग्र सो गावै ८०

इति श्रीस्वामीअग्रदासजीकृता ध्यानमञ्जरी समाप्ता ॥

टीका—ध्यानमञ्जरी इस ग्रन्थ का नाम है। प्रेमियों को सुनने मात्र से मोद को बढ़ानेवाली है। मञ्जरी पूज्य होती है और सबके शिर पर रहती है—ऐसे ही यह ध्यान की मञ्जरी, उसी मञ्जरी के समान सब सन्तों को आदरणीय होगी। इसी से उनके लिये इसका वर्णन किया गया है। श्रीरघुवर के दास मुदित मन होकर श्रीअग्रस्वामीजी इसका गान करते हैं ॥ ८० ॥

इति श्रीध्यानमञ्जरीकठिनपदबोधिका टीका समाप्ता।

संवत् रस नव नव शशि अधिश्रावण दिन चन्द।
कृष्णा चतुर्दशि कठिन पद बोधक टीका अमन्द ॥ १ ॥